International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

# संस्कृत लोक कथा–साहित्य

**पूनम रानी**
**असिस्टेंट प्रोफेसर**
**सिंह राम मैमोरियल कॉलेज**
**उमरा, हांसी, हिसार**

**भूमिका–**

लोक् (देखना) धातु एवं छञ् प्रत्यय के संघात से 'लोक' का आविर्भाव हुआ है। सभी प्रत्यक्ष लोक है। यही नहीं, लोक भी तीन माने गए हैं और चौदह भी इहलोक परलोक को विषय में पढ़ा व सुना जाता है। पर हमें वायवी लोकोत्तर की अपेक्षा हमारे आसपास के इहत्वोक की चर्चा ही अभिष्ट है। क्योंकि लोकपद्धति का अनुसर्ता लोकापवाद का पात्र नहीं होता। लोक मर्यादा से प्रतिबद्ध लोकजीवन की यात्रा को सुगम बनाने के लिए अपनाये गए लोक के विविध साधनों में लोक मर्यादा से प्रतिबद्ध लोकजीवन की यात्रा को सुगम बनाने के लिए अपनाए गए लोक के विविध साधनों में लोकगाथा तथा लोककथा का अपना विशिष्ट स्थान है। परम्परा से लोक में गाये जाने वाले गीत को लोकगीत एवं ऐसे ही कथात्मक गीत को लोकगाथा कहते हैं। लोकजीवन का सफल अनुरंजन करने में ये दोनो (लोकगाथा व लोककथा) धाराएं अज्ञात काल से लोक संस्कृति का अविच्छिन रूपेण श्रुतिपरम्परया वहन करने में सफल रही है। हमें इन द्रष्टाओं की मेधा का लोहा मानना होगा। जिन्होने लोकरंजन के ये रसभासित साधन सुलभ किये।

हमें ज्ञात नहीं कि इस सृष्टि का निर्माता कौन है, हमें यह यथार्थ ज्ञान नहीं है कि मानव ने कब व कैसे अपनी जीवनचर्या प्रारम्भ की, तथैव इन लोककथाओं की उद्भावना भी हमारी ज्ञान–सीमा से परे है। अज्ञातकाल से अज्ञातजनों की ये कल्पना प्रसूत परियाँ अगणित जिह्व्याओं पर थिरकती रही। अनन्तकाल तक पुरखों की वाणी का परवर्ती के निकट आ जाते हैं, दोनों की अभिभूतियां समान प्रभावभरित हो जाती है। उस सभ्यता का इस सभ्यता से

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

साक्षात्कार हो जाता है। अनन्तकाल की लोकयात्रा में देशकालानुरूप उनके परिवेश में अन्तर भी आ जाता है। परन्तु तत्त्व अन्ततः वही रहता है। लोक जीवन की उन आदिकथाओं का पल्लवन ही परवर्ती लिखित अथवा अलिखित साहित्य है। चित्र–कल्पना के प्रारम्भिक रूप में गुहाओं की भित्तियों पर प्राप्त होते हैं जो आदिमानव की वास्थली है। उन्ही चित्रों में अंकित वाद्य एवं चित्रों में ही तत्कालीन संगीत–अभिरूचि के भी संकेत प्राप्त होते हैं। इस प्रकार हमें लोकजीवन के आल्हादक तत्व लोककला एवं लोकसंगीत के जीवन्त उदाहरण यह सोचने को बाध्य कर देते हैं कि ये कल्पनाशील मानव की सृष्टि हैं जिसके हाथ विविध चित्र बनाने को आतुर हो उठे, विविध खिलौने बनाने में व्यस्त हो गए। निश्चय ही प्रकृति की चिरन्तन एवं नूतन परिवर्तनशीलता देखकर आल्हाद से मन मचल उठा और स्वतः कण्ठ से निर्झरवत् गान झर पड़े। आपस में मिल बैठे दो–चार वाग्मी ग्रामीण। अपने में से ही किसी अप्रतिम वीर की बात कहने लग गए। उसमें कल्पना का पुट भी आ गया। ये कल्पनाभरित बातें साभिनय व्यक्त होने लगीं। इस अभिनय में ही भावी लोकनाट्यों के बीज छिपे थे जो स्वयं परवर्ती नाट्यों के उत्स हैं।

आदर्श वीर ने गीतों में स्थान पाया गीतों में कल्पना का पुट बढ़ने लगा। विशिष्ट शैली में, विशिष्ट लय एवं पंक्ति के विशिष्ट प्रतिबन्ध के साथ ही वक्तृत्वशक्ति का परिचय भी दिया जाने लगा। यह भी ज्ञात हुआ कि इन गीतों में यदि निश्चित गणना के अक्षर हों तो लय की सुरक्षा हो जाती है और उसके साथ ही छन्दोंनिर्मिति भी होती गई। ऐसी छन्दोबद्ध वरिगााथाओं के गायक अपनी इस खोज के कारण दृष्टा अथवा ऋषि कहलाए। इनके गतिनायक अतिमानवी देवगण भी बने। इन्होंने इनके आह्वाहन में स्तुत्तियाँ भी रची। इनकी वाणी लोकवाणी थी, इनके गीत लोकगीत थे, इनके कथ्य लोककथा बन गए। इन्हे समवेत रूप में ऋक् कहा गया और गेय ऋक् को सम नाम दिया गया। अतः समूचा वैदिक साहित्य परम्परागत लोकसाहित्य है। सीधे–सादे गीतों के परिवेश में साधारण जीवन के तत्कालीन लौकिक भाषा में सरल–सहज हृदयोद्गार निबद्ध कर दिए गए।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

ज्ञान की गहन धाराओं में अवगाहन के लिए भी लोकदर्शन आवश्यक माना गया है। चाहे दर्शन के क्षेत्र हो अथवा काव्य का, लोकवृत्त के ज्ञान के बिना वह अधूरा है। मम्मट ने भी अपने काव्यप्रकाश में लोकवृत्त, शस्त्र, काव्य आदि के विमर्श से काव्युत्पत्ति (निपुणता) का होना स्वीकार किया है। अतः ज्ञान की अभिव्यक्ति की जब पहली–पहली किरण फूटी थी, वह वैदिक काल लोकदर्शन के बिना अपना अस्तित्व ही कैसे बनाता ? उसमे सर्वथा लोकापेक्षा है।

इस दृष्टि से ऋग्वेद लोक साहित्य का आदिग्रंथ है। जिसके गीत लोकगीत हैं, जिसकी कहानियाँ लोककथाएँ हैं एवं जिसका दर्शन लोकदर्शन है। ये लोककथाएँ उपाख्यानों के रूप में सुरक्षित हैं।[1] इन्हे संवाद सुक्त भी कहते हैं। इनमें यम–यमी, उर्वशी–पुरूरवम्, सरमा–पणि संवाद विज्ञात हैं। वैसे ऋग्वेद में आख्यानों की कमी नहीं है। कुछ वैयक्तिकदेव देव विषयक हैं तथा कुछ का विषय सामूहिक घटना है। युगान्तर में इन आख्यानों के स्वरूप में परिवर्तन एवं परिवर्धन होता रहा। जिनका ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, सूत्र, निरूक्त, अनुक्रमणी, सायणभाष्य, रामायण, महाभारत, विविधपुराण एवं लौकिक रचनाओं से संक्रमण होता रहा। स्वभावतः युग एवं कालानुरूप उनमें परिवर्तन होता गया। ऋग्वेद में लगभग 30 आख्यानों के स्पष्ट उल्लेख हैं, इन वैदिइक आख्यानों के साथ ही दान स्तुतियों में अनेक नृपों के नाम भी मिलते हैं। इन वैदिक आख्यानों मे से प्रख्यात आख्यानों को मूलरूप में कहानी का स्वरूप देने का भी अधुनातन प्रयास हुआ हैं यही नहीं ऋग्वेदीय आख्यानों को भी परखा गया है। उदाहरणार्थ ऋग्वेदीय उर्वशी–पुरूखा के 18 पद्यात्मक सूक्त (10/15)[2] में एक मर्त्य और एक अप्सरा में परस्पर संवाद होता है। जिसका उन्मीलन शतपथ ब्राह्मण में पैदा होता है। जिसका संक्षेप कृष्ण यजुर्वेद की काठक संहिता[3] में प्राप्त होता है। वैदिक आख्यानों के मूलस्वरूप के विषय में भी पाश्चात्य विद्वानों में पर्याप्त मतभेद रहा है। अथर्ववेद में लौकिकता, लोक–विश्वास और लोकाचार के प्रचुर प्रमाण प्राप्त होते हैं।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

यज्ञ अनुष्ठान इत्यादि कर्मकाण्डों की व्याख्या से ब्राह्मण–साहित्य का विशेष संबंध है, परन्तु प्रसंगतः किसी समस्या अथवा संस्था का रहस्य समझाने के लिए भी ब्राह्मण उपाख्यानों का आश्रय लेते हैं।

जल प्रलय का उपाख्यान[4] तो पुरातन है ही, परन्तु शुनः शेप का आख्यान[5] तो ऐतरेय ब्राह्मण के संकलकों की दृष्टि में भी इतना प्राचीन है कि वह राजसूय का एक अविभाज्य अंग बन गया। ऐतरेय के इस आख्यान की लोककथा कितनी प्राचीन होगी, यह कल्पना से परे की लोक कथा कितनी प्राचीन होगी, यह कल्पना से परे की वस्तु है। यह कथा विजय तथा पुत्रात्पत्ति से भी संबंध है। इन कथा–सन्निवेशों का मुख्याभिप्राय यज्ञ की किसी प्रक्रिया यज्ञ की किसी प्रक्रिया को युक्ति युक्त सिद्ध करना अथवा स्पष्ट करना है। इनमें कुछ कथाएँ यज्ञ भूमिका के स्पष्टीकरण के लिए भी तत्काल निर्मित की गयी हो सकती हैं। ऐसी कथाएँ कथावचक के प्रत्युत्पन्नमतित्व का परिणाम है। यथा–मन–वाणी, सोम की चोटी, आदि ऐसी कहानियाँ हैं।[6] मैत्रायणी संहिता में पर्वत के पंखों की उत्पत्ति की कथा दी गयी है। शुनः शेप कथावाचक को एक हजार गायें, अध्वर्यु को सौ तथा एक स्वर्णपीठ, होता को दक्षिणा में रजतरथ जिसे खच्चर खींचते हों, देने होते हैं। ये उस समय की प्ररूढ़ियाँ हैं जिनका खण्डन असंभव है।[7]

वैदिक युग अन्धविश्वासों का युग था। शक्ति के सामने सिर झुकना, उसकी अनन्त सत्ता स्वीकार करना तत्कालीन जनता की प्रवृत्ति थी। अतः हमें यह बात स्वीकारने में कठिनाई होगी कि उस युग के किसान, व्यापारी गडरिये और वीर ऐसी अजनबी कहानियाँ न कहते हों। वैदिक वाड्.मय में ऐसे गीतों व कहानियों का संग्रह इसलिए नहीं हो पाया कि ऐसे उपाख्यानों का उपयुकत स्थान रामायण, महाभारत पुराण आदि थे। अगणित सहस्राब्दियों में प्रवहमान वीरकथाओं का संकलन कर दो महाकाव्य रचे गये–रामायण और महाभारत। ये लोकवाड्.मय और लोकजीवन के स्वाभाविक प्रतिरूप थे। इतिहास और जीवन–कथा भारतीय वाड्.मय के अंग माने गए हैं–'यन्न भारते तन्न भारते'–जो महाभारत में नहीं है, वह भारतवर्ष में नहीं है।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

महाभारत वस्तुतः भारतीय संस्कृति का कौश है, जिसके ज्ञान के बिना भारत का ज्ञान अधूरा है। महाभारत भारत का दर्पण है।

भारतीय लोककथाओं की परम्परा अज्ञात काल से आज तक अजस्र चली आ रही हैं। जिसकी पुष्टि ''लोके वेदेय'' इस व्यापक सीमा से भी होती है। पाणिनि और उनके भाष्यकार महर्षि पतंजलि के वेद और लौकिक संस्कृति में अन्तर पर एक ही अनन्त एवं अजस्र संस्कृति के दो खण्ड कर दिये, अपनी सुविधा के लिए। भारतीय–कथाओं ने दर्शन जैसे गहन विषय में स्थान पा लिया। सांख्या के चेतन, पर निष्क्रिय पुरूष एवं जड़ परन्तु चेतनवत् सक्रिय प्रकृति दोनों के पंग्वन्धवत् एक–दूसरे के सहयोग से सृष्टि होती है। यह अन्ध–पंगु की कथा लोक से ली गई प्रतीत होती है। उपमान सदा शाश्वत एवं सर्वविख्यात होता है, अतः ईसवी पूर्व से न जाने कितनी सदियों पूर्व से यह कहानी जनजीवन में घुलमिल गयी प्रतीत होती है जिससे आज का प्रत्येक प्रबुद्ध नागरिक सुपरिचित है। वेदान्त में प्रयुक्त ''दशमस्त्वमसि'' भी ऐसा ही लोकाख्यान है। इसी प्रकार अर्धजरती, काकतालीय कूर्ममण्डूक, दण्डापूप, इत्यादि न्याय भी लोक–कथाओं के संकेतक ही हैं। अतः लोक–कथाएँ देश–काल की सीमा से नहीं बांधी जा सकती हैं।

जैसा की पहले कहा जा चुका है, कालिदास की विक्रमोर्वशीय प्राग्वैदिक युगीन कथा की ही चरम रमणीय परिणति है एवं अभिज्ञान शाकुन्तलम् भी महाभारतीय लोक–कथात्मक उपाख्यान का मनोरम संस्करण है। रघुवंश में रामायण एवं महाभारत के लोकप्रिय कथानक को अपनाया गया है जिसका मूलाधार भी संभवतः पुरातन काल से आ रही लोककथाएँ रही होंगी।[8] परवर्ती कादम्बरी और दशकुमार चरितम् इत्यादि के उपजीव्यभी लोककथामूलक ही प्रतीत होते हैं। तथैव भासकृत चारूदत्त एवं अविमारक नाटक भी अनुश्रुति एवं लोककथाओं के आधार पर ही रचे गये हैं। उदयन कथा, बौद्ध जैन तथा ब्राह्मण साहित्य में समान रूप से पायी जाती हैं।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

शिक्षाप्रद नीतिकथाएँ यहां पशु–पक्षियों के माध्यम से कही जाती हैं। संस्कृत में पंचतंत्र की कथाएं कुछ ऐसी ही हैं। पंचतंत्र ने भारतीय वाणी को विश्वव्यापी बना दिया है। इस प्रकार पंचतन्त्र व अन्य भारतीय कहानियाँ विश्व के इत्तर भागों के निवासियों को भी आनन्दविभोर करती रही हैं। 14वीं सदी के लगभग बंगाल नृप धवलचन्द्र के आश्रित कवि नारायण पण्डित ने पंचतंत्र का आधार पर एक लोकप्रिय कथाग्रंथ 'हितोपदेश' की रचना की। इसकी आधी कहानियाँ पंचतन्त्र से ली गयी हैं। इसमें मित्रलाभ, सुहृदयभेद, विग्रह एवं सन्धि चार परिच्छेद हैं।

ये परी एवं पशु कथाएँ युगों से भारतीय लोककथाओं का स्पन्दन कर रही हैं। ऊपर से जो केवल परिकथाओं का संग्रहमात्र लगती हैं, स्वयं भारतीय उसे युगों से नीतिशास्त्र एवं धर्मशास्त्र के संग्रह के रूप में स्वीकृत करते आये हैं।

वस्तृतः भारत परिकथा, पशुकथा एवं पक्षीकथा की मूल भूमि है। लोककथाओं का इन वस्तुओं से घना संबंध है। तत्संबंध साहित्य परवर्ती युग में कितना ही उपचित होता गया। प्राचीन युग के भारतीय रसिक आख्यानकार थे जिसका रसभरित आख्यान–साहित्य और विशेषतः पशुकथा–साहित्य यूरोपीय आख्यान–साहित्य का उपजीव्य रहा।

पैशाची भाषा में लिखी हाल (दूसरी सदी) के आश्रित कवि गुणाढ्य की बृहत्कथा भारतीय कथाकोश है। इसमें परम्परा से प्राप्त लोककथाओं को लोकभाषा प्राकृत में प्रस्तृत करने का सफल प्रयास हुआ है। लुप्त होने के कारण मूल कथा से हम अपरिचित हैं, परन्तु मूल का संस्कृत अनुवाद करने की प्रतिज्ञा कर तीन विद्वानों द्वारा तीन विभिन्न संस्करण प्रस्तुत किये हैं जिनके आधार पर मूलग्रंथ के विषय में ज्ञान प्राप्त हो जाता है। ये तीन संस्करण हैं–

1. 9वीं सदी के बुधस्वामीकृत बृहत्कथा श्लोक संग्रह
2. क्षेमेन्द्रकृत 7500 श्लोकात्मक बृहत्कथामंजरी
3. सोमदेवकृत कथासरित्सागर

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

जिसमें 2400 श्लोक हैं। मूल बृहत्कथा से उपर्युक्त के अतिरिक्त बाण, दण्डी, सुबंध, त्रिविक्रमभट्ट, भोज आदि परिचित थे, जिसके मूल उद्धरण हमें भोज के सुप्रसिद्ध ग्रंथ श्रृंगार–प्रकाश में प्राप्त हो सकते हैं। कथाओं का यह पुरातन संग्रह रामायण–महाभारत के समान भारतीय कथा–काव्यों का उपजीव्य रहा है। इनकी कथाओं में सर्वत्र विचित्रता है। इसमें पशु–पक्षियों का समावेश है। उदयनपुत्र नरवाहनदत्त इसका नायक है। बाण, दण्डी, सुबन्धु, भवभूति, हर्ष, भोज इत्यादि कितने ही कथाकार इस कृत्ति के ऋणी हैं।

विचित्र लोककथाओं का साहित्यिक संस्करण दशकुमार चरितम् है। उदयन के समान शूद्रक भी लोककथाओं का नायक बन गया था। लीलावती, अनंगवती, चित्रलेखा, गोरोचना इत्यादि अनेक कथाओं का उत्स लोककथाओं में ही रहा होगा। ये कृत्तियाँ आज अनुपलब्ध हैं। भोजराज की श्रृंगार मंजरी कथा में श्रृंगारपरक 13 कहानियाँ संकलित हैं। इनका संकेत बृहत्कथाश्लोक संग्रह में नहीं है अतः निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि ये कथाएँ बृहत्कथा का अंग रही थीं अथवा नहीं। चित्त विनोद के लिए ही शुकसप्तति की भी रचना हुई। इसमें एक शुक प्रोषितपतिका को प्रतिरात्रि एक–एक कहानी सुनाकर 70 रात तक उसे व्यभिचारिणी होने से बचाता है। कथाएँ सभी ऐसी व्याभिचारिणियों की हैं। जिनका अन्ततः परिणाम प्रतिकूल निकलता है। अन्तिम दिन उसका पति वणिक् आ जाता है।[9]

## उपसंहार

इन शिक्षाप्रद कथाओं में लोकजीवन एवं संस्कृति का सच्चा स्वरूप प्राप्त होता है। वैसे विविध विद्वानों ने लोककथाओं के विविधरूप सुझाये हैं। इन वर्गीकरणों के अनुसार ही इन लोककथाओं की विशेषताएँ भी हैं। इन कथाओं में अपने–अपने समय में प्रचलित लोकविश्वासों का भी पर्याप्त पुट है। डॉ0 सत्येन्द्र ने इनके आठ रूप स्वीकार किये है, तो श्री गणेश चौबे ने 13 रूप स्वीकारे हैं। संस्कृत की अपार लोककथा राशि को यदि हम विषमगत वर्गीकृत रूप में देखना चाहें तो ये विभाग संभव होंगे–

1. प्रकृति देवता के मानवीकरण से संबंध कथाएँ।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

2. पशु–पक्षी संबंध कथाएँ
3. भूत पिशाच–राक्षस की कथाएँ
4. यौन कथाएँ
5. प्रहेलिकागत कथाएँ
6. ऋषि कथाएँ
7. जाति एवं बन्धुकथाएँ
8. उपदेश कथाएँ
9. जाति रहस्यविद्या कथाएँ
10. देवता एवं अप्सरा से संबंधित कथाएँ
11. ऐतिहासिक कथाएँ
12. पर्वत तथा नदियों से संबंधित कथाएँ
13. उदयन, शूद्रक, भोज से संबंधित कथाएँ
14. उदाहणात्मक कथाएँ
15. नीतिगत कथाएँ
16. वैत्रिन्य कथाएँ
17. प्रचलित न्यायगत कथाएँ
18. उपहास कथाएँ

इसके अतिरिक्त विभेदों की संभावना भी निरस्त नहीं की जा सकती। इन वर्गीकरणों के अनुसार ही लोककथाओं की विशेषताएँ भी हैं। राजाभोज ने कथाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया है–आख्यायिका, उपाख्यान, आख्यान, निदर्शन, प्रवह्लिका, मन्थमल्लिका, मणिकुल्या, कथा, परिकथा, एवं कथानिका को ही उपाख्यान कह दिया है, जो समुचित नहीं है।

भोजकृत विभाजन अत्यन्त व्यापक एवं सूक्ष्म है। कथाविषयक इतना सूक्ष्म विभाजन न इससे पूर्व हुआ एवं न बाद में। इसलिए भोज ने काव्यभेदों में श्रृंगार प्रकाश को साहित्य प्रकाश

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

कहा है।[10] संस्कृत लोककथाएँ निश्चय ही इन विविध रूपों ज्ञात–अज्ञात अनगिनत कवियों द्वारा सदियों तक कही गयीं। जिनमें से अधिकांश का लोप हो गया। फलतः कतिपय से ही हमें संतोष करना पड़ रहा है।

## संदर्भ ग्रंथ सूची–

[1] बलदेव उपाध्याय, वैदिक कहानियाँ।

[2] ऋग्वेद शूक्त–10/15

[3] कृष्ण यजुर्वेद काठक संहिता (3/4/8/10)

[4] शतपथ ब्राह्मण–(1/8/11)

[5] ऐतरेय ब्राह्मण– (7/13/18)

[6] शतपथ ब्राह्मण, (1/4/5/8–12) (3/2/4/2–6)

[7] मैक्डानल, वैदिक माइथालॉजी।

[8] द. गो. लिमये, भारतीय उपाख्यान एवं महाभारत।

[9] शुकसत्पत्ति

[10] शृंगार प्रकाश तथा राघवन का भोजराज् शृंगारप्रकाश, अध्याय 11 एवं 12